International Journal of Sociology and Humanities

ISSN Print: 2664-8679
ISSN Online: 2664-8687
Impact Factor: RJIF 8.33
IJSH 2025; 7(2): 132-135
www.sociologyjournal.net
Received: 25-06-2025
Accepted: 28-07-2025

डॉ. राजकुमार
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी–विभाग, जनता विद्या मन्दिर गणपतराय रासीवासिया महाविद्यालय, चरखी दादरी, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. राजकुमार
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी–विभाग, जनता विद्या मन्दिर गणपतराय रासीवासिया महाविद्यालय, चरखी दादरी, हरियाणा, भारत

विनय कुमार के जीवनवृत्तात्मक उपन्यासों में प्रतीकात्मकता का निर्वाह

राजकुमार

DOI: https://www.doi.org/10.33545/26648679.2025.v7.i2b.196

सारांश
गहनता से विचार करने पर इस सत्यता का आभास होता दिखाई देगा कि दीर्घ जीवी वही घटना, प्रसंग अथवा प्रवृति और पात्र की प्रवृति सिद्ध होती है, जो हमारे मन–मस्तिष्क का दैनिक मानसिक जीवन का अविछिन्न अंश बन चुकी हों। ''महाभारत की घटनाएँ उसी कोटि की बन चुकी है। अन्यथा सहस्रों वर्षों से जनता उन्हें इस भाँति सहेजती? यही प्रतीकात्मकता कहलाती है।'' जो हमारे हृदय में सदियों से किसी न किसी रूप में स्थायीत्व प्राप्त कर लेती है। वही प्रतीकात्मकता का यथार्थ रूप है। विनय कुमार की औपन्यासिक कृतियों में प्रतीकात्मकता की अभिव्यक्ति जहाँ–जहाँ भी हुई है, बड़े सुन्दर और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत हुई है।

कूटशब्द : प्रतीकात्मकता, जागरण, महाभारत, युग, चरमोत्कर्ष

प्रस्तावना

पूर्ण शोध पत्र :–

सामान्यतः 'महाभारत' के उन्ही आरव्यानों एवं कथांशों को ग्रहण किया जाता है जिनके माध्यम से लेखक अपनी विचारधारा की अभिव्यक्ति कर सके। अतः लेखक के वैयक्तिक दृष्टिकोण को समझते हुए प्रतीकात्मकता की समीक्षा की गई है। जब विनय महाभारतीय कथा पर आधारित प्रबन्ध काव्यों का विश्लेषण करते हैं, तो स्पष्ट कहते हैं कि आज के साहित्यिक विषयों में काफी परिवर्तन हुआ है अथवा किया जाता है। ''साहित्य के सभी अंगों पर सामाजिक समस्याओं का प्रभाव अत्यन्त गम्भीर और व्यापक रूप में पड़ा है।''[1] भारतीय जीवन में सांस्कृतिक उत्थान एवं जागरण के सभी सामाजिक और राजनैतिक उपादानों ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से आधुनिक साहित्य को प्रभावित किया है, इसमें सन्देह नहीं।[2] ''नवचेतना एवं नवजागरण के स्वाभाविक परिणाम स्वरूप भारतीय जीवन की मान्यताओं में परिवर्तन आया है।''[3] शताब्दियों से एक परम्परावादी दृष्टि से चरित्रांकन की नीतियाँ बदलने लगी, घटनाचक्र के वर्णन का रूप बदलने लगा एवं भाषा–शैली में भी व्यक्तिगत रूप से परिवर्तन आने लगा। ''इस युग में एक–दूसरे रूप से ही अतीत के निरीक्षण–परीक्षण की पद्धति स्वीकार की गई। आस्था का स्थान तर्क ने और श्रद्धा का स्थान विवेक ने ले लिया तथा अभिव्यक्ति का स्थान उसकी प्रतीकात्मकता रूपी शैली ने लिया। सम्पूर्ण साहित्य जड़ परम्पराओं से मुक्ति का स्वरघोष करने लगा। साहित्य समाज की इस महती आवश्यकता का अनुभव करके अतीत के पुनर्लेखन की सजगता हुई। महाभारत के कथानकों को लेकर लिये जाने वाली सभी प्राचीन घटनाओं को नवीन आलोक में प्रस्तुत किया।''[4] विनय ने प्राचीन आदर्श की यथावत् स्थापना की और उसमें सामयिक आदर्शवादी परिवर्तन करके सन्तुष्टि प्राप्त की। उन्होने उपेक्षित पात्रों के जीवन की मुख्य घटनाओं के मर्म को समझा और उनको मानवता का प्रतीक मानकर चित्रित किया।

विनय की औपन्यासिक कृतियों में जिन घटनाओं एवं पात्रों का चित्रांकन किया है उनमें उन्होंने अपनी भाषा–शैली के माध्यम से प्रतीकात्मकता का पूर्णरूपेण निर्वाह किया है। जहाँ तक महाभारत की कथा की बात है, उसमें विचित्राओं की भरमार है और उसमें भारतीय जीवन की अभिव्यंजना है। उसकी ओर झुकाव नितान्त स्वाभाविक है। बहुत–सी कथाएँ ऐसी होती हैं, जिनमें अनेक गुण पाये जाते हैं, जिसके कारण वे आकर्षण का केन्द्र बनी रहती हैं, चाहे कोई भी समय हो या कोई भी युग हो। इनमें प्रतीकात्मकता का पुट उन कथाओं को और भी आकर्षक एवं रोचक बना देता है। आदर्श किसी कथा को अल्पकाल के लिए चमत्कृत कर सकता है परन्तु प्रतीकात्मकता का प्रभाव दीर्घ कालीन होता है।

''इतना अवश्य है कि पौराणिक कथाकार को 'प्राचीन' में इतना नहीं गिरना चाहिए कि वर्तमान प्रगति उसकी निगाह से ओझल न होने लगे। ''इसी प्रकार उसे वर्तमान प्रगति से इतना आतंकित नहीं होना चाहिए कि उसे प्राचीनता असंबद्ध और अनुपयोगी प्रतीत होने लगे।[5]

गहनता से विचार करने पर इस सत्यता का आभास होता दिखाई देगा कि दीर्घ जीवी वही घटना, प्रसंग अथवा प्रवृत्ति और पात्र की प्रवृत्ति सिद्ध होती है जो हमारे मन–मस्तिष्क का दैनिक मानसिक जीवन का अविछिन्न अंश बन चुकी हों। ''महाभारत की घटनाएँ उसी कोटि की बन चुकी हैं। अन्यथा सहस्रों वर्षों से जनता उन्हें इस भाँति सहेजती? यही प्रतिकात्मकता कहलाती है।''[6] जो हमारे हृदय में सदियों से किसी न किसी रूप में स्थायीत्व प्राप्त कर लेती है। वही प्रतीकात्मकता का यथार्थ रूप है। विनय कुमार की औपन्यासिक कृतियों में प्रतीकात्मकता की अभिव्यक्ति जहाँ–जहाँ भी हुई है, बड़े सुन्दर और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत हुई है।

'महाभारत' कथानक में बहुत–सी कथाएँ आती हैं। विभिन्न कथाओं के विभिन्न नायक हमारे समक्ष आते हैं, परन्तु श्री कृष्ण एक ऐसे नायक है जो सम्पूर्ण कथा से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुडे हुए हैं, जिसे कथा के महानायक की संज्ञा प्रदान कर दी जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। उसे तो महाभारत की कथा की प्रत्येक घटनाओं की धूरी कहा जा सकता है। कृष्ण को तो भगवान के पद की प्राप्ति हो चुकी है इसीलिए तो श्रेष्ठ श्रेणी में आते हैं। परन्तु पांडव देवतुल्य न होते हुए भी महाभारत में उनके गुणों की श्रेष्ठता को सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है। विभिन्न घटनाओं एवं प्रसंगों से यह झलकता है कि ये भी श्रेष्ठ गुणों के चरित्र हैं, जो अपने जीवन में श्रेष्ठ करने का ही उद्देश्य रखते हैं और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहे हैं।

श्री कृष्ण महाभारत में आदि से अन्त तक रहते हैं और समय–समय पर अनेकानेक गुण प्रकट कर कथा एवं पाठक को बान्ध लेते हैं। ''कृष्ण के चरित्र की प्रमुख विशेषता यह है कि वह एक ओर तो सुख–सौन्दर्य की पूर्णता का आधार हैं, तो दूसरी ओर सम्पूर्ण सांस्कृतिक रीति, नीति, शास्त्र, मर्यादा, जीवन–दर्शन और राष्ट्रीयता के प्रतीक हैं।''[7] कृष्ण लोकरक्षक, योगीराज एवं धर्म संस्थापक आदि प्रतीकों के रूप में बहने वाली धारा का नाम हैं। प्रत्येक युग इनके चरित्रों को अपने अनुसार कल्पित कर, प्रेरणा प्राप्त करता है। उदाहरण स्वरूप कृष्ण ने अपने युग में असुर वृत्ति सम्पन्न राजाओं को नष्ट करके एक स्वतन्त्र साम्राज्य की स्थापना की। ऐसे में परितृप्त प्रजा ने उन्हें ईश्वर बना दिया और कृष्ण का चरित्र दिव्य रूप में चित्रित किया। कृष्ण ईश्वर, नारायण के अवतार बन गए और अनेक कथाओं द्वारा इस स्वरूप की पुष्टि की गई।''[8] उन्होनें ईश्वर के रूप में पांडवों की रक्षा की और विस्तार से गीता प्रसंग में अपने स्वरूप पर प्रकाश डाला। उनके चरित्र को उनके व्यक्तित्व को साधारण चरित्र की कसौटी पर नहीं रखा जा सकता। वे ब्रह्म हैं, परमसत्ता, अव्यक्त और सर्वव्यापक हैं। उन्हें ब्रह्म रूप के प्रतीक के रूप में स्वीकारा गया है।

''तुम योगेश योग साकारा भोग शक्ति सिरजत भवसारा।
संसृति अणु–अणु व्याप्त तुम प्राण रूप भगवान।।''[9]

युधिष्ठिर धर्म प्रतीक माने जाते हैं। जिस दिन भीष्म शान्तनु के दूसरे विवाह के लिए मार्ग प्रशस्त करते समय दो प्रतिज्ञाएँ करते हैं, वहीं से धर्मराज का प्रभाव प्रकट होने लगता है।

द्यूतक्रीड़ा ही सर्वाधिक शक्तिशाली एवं मूल कारण रहा महाभारत की घटना का। युधिष्ठिर की द्यूतक्रीड़ा ही महाभारत का, महाभारत के युद्ध का, मूल कारण सिद्ध होती है। युद्धोपरान्त भी युधिष्ठिर चिन्तित रहते हैं। नकुल से पता चलता है कि उतरी भारत का भरतखण्ड कष्ट में है। वायुमण्डल विषाक्त एवं जलदूषित। ग्रामवासियों का पलायन। मार्गों में शव ही शव। कितने ही स्थलों पर अभी भी ज्वलनशील पदार्थ मौजूदा होना, क्या यह सब किसी आणविक युद्ध का संकेत नहीं था जबकि अब तो युधिष्ठिर के राज्याभिषेक का समय था। कौरव पत्नियाँ भी उपस्थित थी, परन्तु उदासीन एवं कान्तिहीन उनमें न कोई उत्साह था और न ही जिज्ञासा थी। नगर की सारी कार्यभार की जिम्मेदारी युयुत्सु को सौपी गई थी। सभी जाने माने स्थल खाली द्यूतघर भी खाली, यहाँ तक वेश्यालय भी खाली पड़े थे। औषधालयों में मरीजों की संख्या अधिक थी। कृष्ण के साथ वेदव्यास जी आते हैं। युधिष्ठिर उनका स्वागत करते हैं। वेदव्यास जी बताते हैं कि युद्ध के पश्चात् की व्यवस्था बहुत कष्टदायी होती है। दुःख और अव्यवस्था चरमोत्कर्ष पर। युधिष्ठिर में भीष्म पितामह से उनके अन्तिम समय भेंट एवं दर्शन करने की हिम्मत नहीं। उन्हें पितामह को घायल किए जाने पर आत्मग्लानि का सन्ताप होता है। ऋषियों से घिरे हुए पितामह के पास जाकर युधिष्ठिर ने कहा, ''दादा'' मैं युधिष्ठिर आपकी सेवा में आज फिर उपस्थित हो गया हूँ और आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ। यदि आप मेरी बात सुन रहे हैं तो कृपया आज्ञा दें कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ। आपके द्वारा बताए गए समय पर ऋषियों के साथ मैं उपस्थित हूँ।''[10] धृतराष्ट्र गांधारी आदि प्रियजन भीष्म पितामह के चरणो में शीश झुकाए एवं हाथ बाँधे उपस्थित थे। कितना समय था भीष्म के पास, जिसमें उस आपराधिक मुद्रा में खड़े अपने वंशजो को क्षमा भी करना था और अपने अन्तिम प्रयाण पर जाते समय देवों की आराधना भी करनी थी। बीच–बीच में उभरी भीष्म की उपचेतना में महाराज शान्तनु की प्रतिमा मानों उन्हें बार–बार साहस प्रदान कर रही थी और स्मरण दिला रही थी कि चिन्ता मत करो, मेरे लाल। तुम्हारी आखिरी साँस वह होगी, जब तुम स्वयं उसके बाद सांस की कामना नहीं करोगे। भीष्म ने धीरे–धीरे आँखे खोली, उनकी इच्छा थी, सबसे पहले वे अपनी आँखों से इस समय भगवान वासुदेव को देखे। वह उनके प्रकाश में विलीन होना चाहते थे, इसलिए जैसे ही भीष्म ने आँखे खोली, कुछ प्रकाश किरणें परावर्तित होकर उसके चारों ओर फैल गई। कृष्ण भीष्म के चरणों के पास उनके सामने खड़े थे। भीष्म ने कृष्ण को देखकर अपने आपको धन्य माना और धृतराष्ट्र को सांत्वना दी। धृतराष्ट्र के पश्चाताप प्रदर्शन से वातावरण एक दम भारी हो जाता है। ''वास्तव में युधिष्ठिर सभी के दुःख–दर्द से परिचित हैं परन्तु कुछ भी करने में विवश है। कोई उपाय नहीं। युधिष्ठिर ससार की उथल–पुथल से क्षत–विक्षत हो जाने वाले जीव के, प्राणी के, प्रतीक के रूप में उपस्थित होते है''[11] विनय ने युधिष्ठिर को उनके इस रूप से उभारने का प्रयास किया है। भीष्म पितामह कहते हैं – ''मैं जानता हूँ युधिष्ठिर का हृदय बहुत कोमल है। गुरूजनों के प्रति बडी भक्ति रखते हैं। धृतराष्ट्र तुम्हारे पुत्र दुरात्मा थे, क्रोधी, लोभी और ईर्ष्या रखने वाले थे। अतः उनके लिए कभी शोक न करना।''[12] मैंने दुर्बुद्धि दुर्योधन को बहुत समझाया था, उसे स्पष्ट कहा भी था कि जहाँ कृष्ण है, वहाँ धर्म है और जहाँ धर्म है, वहीं जीत निश्चित होती है, इसीलिए वत्स दुर्योधन! कृष्ण का संधि प्रस्ताव मान लो यह बड़ा ही अच्छा अवसर है, यह सन्धि सम्मान जनक है, तुम पांडवो से सन्धि कर लो। लेकिन उस दुर्बुद्धि के समझ में कुछ नहीं आया, उस पर तो शकुनि के छल का पर्दा पड़ा हुआ था।''[13] भीष्म मानव–व्यक्तित्व के सबसे महत्वपूर्ण पक्ष परिशुद्ध संकल्प के प्रतीक हैं। ऐसे संकल्प (भीष्म) को विकसित (जन्म) करने के लिए व्यक्ति को परिशुद्ध विवेक (गंगा) से युक्त प्रशान्त मन (शान्तनु) बनाए रखना आवश्यक है। मानसिक प्रशान्ति ही शान्तनु है। गंगा देवी परिशुद्ध विवेक की प्रतीक हैं। परिशुद्ध संकल्प–शक्ति का विकास विभिन्न अवस्थाओं में क्रमिक रूप से होता है। साधक को प्रत्येक अवस्था का सामना करना पड़ता है। फिर उससे आगे बढ़ना होता है। जैसे गंगा देवी ने एक के बाद दूसरे बच्चे को जन्म दिया और उसे गंगा में छोड़ती गई। यह क्रिया तब तक चलती है जब तक परिशुद्ध संकल्प भीष्म का उदय (जन्म) नहीं हो जाता। इस प्रकार जब

तक अचेतन मन आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के लिए पूर्णतः परिशुद्ध नहीं हो जाता, तब तक साधक अपने संकल्प को अच्छी तरह प्रशिक्षित करने की आवश्यकता होती है।

विनय ने अपनी औपन्यासिक कृतियों में चरित्रों के माध्यम से प्रतीकात्मकता को काफी सँवारने का प्रयत्न किया है। कर्ण को 'सूतपुत्र' की उपाधि से नवाजा गया, सूत के यहाँ लालन–पालन होने के कारण। परिणामतः उन्हें राजकुमार के रूप में बहुत बाद में स्वीकार किया गया। प्रतीकात्मकता का यह रूप बड़ा ही प्रभावोत्पादक बन पड़ा है। आजकल चारों ओर सामाजिक समानता की धूम है। कर्ण की मानसिक स्थिति भिन्न प्रकार की हो गई थी–कुलीनता, कुल और वर्ण श्रेष्ठता यहाँ तक कि उस सबसे अज्ञात चिढ़ मन में समाने लगी थी। श्रेष्ठता का यह भूत सारे सामाजिक राजनीतिक ढाँचे में दिखाई देता था। कर्ण अस्मिता (अहंकार) का परिचायक है। पांचो पांडव जीवन के चार पुरूषार्थ–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रति रूप हैं। विस्तृत दृष्टि कोण से अस्मिता और पुरूषार्थ दोनों भाई हैं। क्योंकि अहंकार के बिना आप कुछ नहीं कर सकते। परन्तु मुक्ति प्राप्त करने के लिए अहंकार को दूर रखने की आवश्यकता होती है। इसलिए महाभारत के इस खेल में अस्मिता (कर्ण) को राजकुमार पांडवों से अलग सारथी के घर में रखा गया है। कर्ण सूर्य–पुत्र है जो इस आध्यात्मिक सत्य का प्रतीक है कि यदि आप अपने अहंकार को ठीक प्रकार से प्रयुक्त करेंगे तो आपके मन से ज्ञान का प्रकाश उद्‌भासित होने लगेगा।''[14] इस प्रतीक को स्पष्टता से समझने के लिए आवश्यक है कि अहं और अकर्मण्यता के बीच भेद को ठीक ढंग से समझ लें। ''मैं हूँ'' यह भाव अहं है यह कारण शरीर का एक भाग है। आपके व्यक्तित्व का यह सर्वोच्च स्तर है। इससे ऊपर अन्नता है।''[15] जब किसी कुलीन को उच्च वर्ण वाले के समक्ष इस कारण झुकना पड़ता, क्योंकि 'यह समाज का श्रेष्ठ है।' तो कर्ण को बड़ी पीड़ा का अनुभव होता था। इस निषेध ने कर्ण के हृदय में कटुता भर दी। उसकी सोच भी नकारात्मक होने लगी और उसकी क्रियाएँ भी। ऐसे में कर्ण की बेचैनी का वर्णन कर पाना बहुत ही कठिन हो जाता है।

धर्मात्मा, सत्यनिष्ठ, वीर पुरूषार्थी, त्यागी कर्ण के भिन्न–भिन्न प्रतीकार्थ वाचक हैं। स्वयं कृष्ण ने कर्ण की चारित्रिक उच्चता का चित्रण इस प्रकार किया है – उसे वृष और बृहस्पति के समान बुद्धिमान होने के कारण जीव का प्रतीकार्थ माना गया है।

त्वमेव कर्ण जानासि वेदवादान्सनातनम्।
त्वमेव धर्मशास्त्रेषु सूक्ष्मेषु परिनिष्ठतः।।''[16]

युद्ध के आरम्भ होने से पहले कुन्ती कर्ण से मिलने आती है, उस समय कर्ण सूर्य की उपासना कर रहा था। अपनी अंजलि से अर्ध्यदान करते हुए कर्ण कुन्ती को बालक से लगे। कुन्ती कुछ समय वैसे ही खड़ी रही और फिर धीरे–धीरे और आगे आ गई। अब तक कर्ण ने कुन्ती को देखा नहीं था, लेकिन अर्ध्यदान देकर वे जैसे ही मुड़े, उन्हें कुन्ती दिखाई दी।

''मैं राजमाता को प्रणाम करता हूँ। सूतपुत्र कर्ण का प्रणाम स्वीकार हो।''

''आयुष्मान भव।'' कुन्ती ने हकलाते हुए गले से कहा। तुम सूत–पुत्र नहीं हो कर्ण। मैं सूर्य को साक्षी मानकर कहती हूँ कि तुम सूत पुत्र नहीं हो। मैं तुम्हारे सामने राजमाता बनकर नहीं आई हूँ। केवल माता बनकर आई हूँ और तुम्हें पहले यह स्वीकार करना पड़ेगा कि तुम सूतपुत्र नही हो।''[17] मैं सूत पुत्र हूँ। इसे मैं ही नहीं जानता, सारा संसार जानता है। जब से मैनें होश सम्भाला है तब से आज तक राधा माँ और पिता अधिरथ की छाया में पला हूँ। वे सूत हैं तो मैं सूतपुत्र क्यों नहीं हुआ? सारे दोष मेरे ही हैं। जन्म में, कर्म में, मेरी वीरता में और मेरे भीतर एक ऐसा पुरुष है, जो व्याकुलता के दोषों से रहित धरातल प्राप्त करना चाहता है।''[18] शक्तिशाली होने पर भी कर्ण जाति हीनता के कारण तिरस्कृत हुआ। यह उसकी मानसिक द्वन्द्वता का प्रमुख कारण बनी। कुल और जाति के अहंकार को समाप्त करने के उद्देश्य से विनय ने कर्ण के चरित्र को प्रस्तुत करके यह कामना की है कि भविष्य में व्यक्ति सामर्थ्य के अनुसार समाज में स्थान ग्रहण कर सकेगा, केवल जन्म के कारण नहीं। कर्ण के चरित्र के माध्यम से यह सिद्धान्त व्यापक रूप में उपस्थित किया गया है जो आज की बौद्धिकता का परिचायक और कर्ण इसका प्रतीक है जो आने वाले समय में प्रतीकात्मक रूप में दृष्टव्य होगा।

जहाँ धृतराष्ट्र मानसिक भ्रम एवं मूढता का प्रतीक है, वही पाण्डु मानसिक परिशुद्धता, सामंजस्य और मानसिक विक्षेप के प्रतीक हैं। विदुर सत्व के प्रतीक के रूप में चित्रित हुए हैं। माद्री व्यक्ति की निम्न प्रकृति का प्रतीक है। नकुल और सहदेव के जन्म के पश्चात् निम्न प्रकृति समाप्त हो जाती है। तब उन्नत प्रकृति कुन्ती जब तक आत्म साक्षात्कार प्राप्त नहीं हो जाता, तब तक जीवात्मा का मार्गदर्शन करती है। यही उसकी प्रतीकात्मकता का स्वरूप है।

''पांडवों का जीवन धर्म और मोक्ष पर आधारित था। उन लोगों ने अर्थ और काम को हमेशा धर्म और मोक्ष के नियंत्रण में रखा। पूरे महाभारत में भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव, युधिष्ठिर के निर्देशन में रहते हुए उन्हें जो सम्मान देते हैं, वही इस तथ्य का प्रतीकात्मक चित्रण है।''[19] दूसरी तरफ कौरवों ने अपना जीवन अर्थ और काम पर आधारित किया था। उन्होंने धर्म और मोक्ष को उपेक्षित कर दिया था। शक्तिशाली होने पर भी दुर्योधन पांडवों को जुए में परास्त कर अपनी कुंठा पर विजय पाना चाहता था। समझाते हुए धृतराष्ट्र ने उससे कहा, "देखो वत्स! जुआ आपसी फूट का मूल कारण है और फिर तुम तो वैसे ही अपनी कुटिलता के कारण पांडवों को नाराज कर चुके हो। इसलिए मुझे तो इस जुए में विरोध ही विरोध दिखाई दे रहा है।''[20]

''मेरा कलेजा जल रहा है और आपको विरोध दिखाई दे रहा है। आपको यह भी ध्यान है – जब मैं ठोस धरातल समझ कर जल की बावड़ी में गचा खाकर गिर गया था तो भीम, अर्जुन और द्रौपदी ने मेरा उपहास करते हुए कहा था कि अंधो की सन्तान अंधी ही होती है और मैं यह वाक्य सुनकर स्थान उपयुक्त न जानकर चुप रह गया था।''[21] दुर्योधन का यह अहंकार ही था जिसके कारण वह पांडवों को अपना शत्रु समझ बैठा था। दूसरों के अर्थ की कामना अपने श्रम से राज्यलक्ष्मी अर्जित न करना, आदमी के भले में नहीं होता। परन्तु दुर्योधन को दूसरों का अर्थ छीनने में जुआ खेलने में कोई बुराई दिखाई नहीं देती थी। उसके अनुसार जुए में थोड़ी बहुत हार–जीत तो होती ही रहती है। जो सीमित होती है। इस प्रकार दुर्योधन का आचरण धर्म के विपरीत कार्य कर रहा था। जिससे उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। विनय ने दुर्योधन के चरित्र को मनोवैज्ञानिक रूप में मानवीय दुर्बलताओं के प्रतीकात्मक रूप ने स्वाभाविक चित्रण किया है, जो गर्व के कारण बार–बार प्रतिशोध के लिए उतावला रहता है। प्रतिशोध की यह भावना उसके जन्मजात संस्कारों की पृष्ठ भूमि में चित्रित की गई है।

लाक्षागृह से पांडवों के बच निकलने की कथा में अनेक गूढ़ आध्यात्मिक रहस्य विद्यमान हैं। इस जन्म में आप जिस 'घर' में रह रहे हैं उसे संस्कृत में 'देह' कहा गया है। देह का अर्थ है – 'दहाति' अर्थात् जो निरन्तर जल रहा है जो प्रकृति की गति के साथ विकसित होता है। विनय कुमार कहते हैं महाभारत की अन्य कथाओं की तरह द्रौपदी का पाँच पतियों से विवाह का अर्थ शाब्दिक से कहीं अधिक प्रतीकात्मक और गहन है। ''द्रौपदी बुद्धि का प्रतीक है। जिसका विवाह जीवात्मा सहित चार पुरुषार्थ के साथ हुआ है।''[22] धर्म–शास्त्रों से अनुमोदित अपवाद के रूप में या तत्कालीन बड़े व्यक्तियों के द्वारा समर्थित होने के कारण भी द्रौपदी का पंच पांडवों से विवाह अनैतिक नहीं था। द्रौपदी को पंचपति प्राप्त कर प्रसन्नता हुई। इसमें कारण था उसका

कामोद्दीपना।[23] उसे युग की प्रतिहिंसा का प्रतीक भी माना गया है, जो उस समय की दास प्रथा के प्रकाश में चित्रित हुई है क्योंकि महाभारत का काल सामन्त प्रथा का सबसे अधिक अव्यवस्थित काल माना जा सकता है।

विनय द्वारा रचित महाभारतकालीन कथानक के आधार पर उनकी प्रेरक लेखनी द्वारा रचित इन औपन्यासिक कृतियों में छुपे गुह्मार्थों को उद्घाटित करने की अद्भुत कला है। महाभारत की कथा का नवीन अर्थ प्राप्त करते हुए मनुष्य अपने मन में चल रहे धर्म–युद्ध को उद्घाटित कर सकेगा। ये कथाएँ उसे आत्मसाक्षात्कार के रूप में अन्तिम विजय प्रदान करती हुई, दिशा निर्देश देती हुई प्रतीत होंगी। मानव स्वयं में ही श्रीकृष्ण, अर्जुन, धृतराष्ट्र, शकुनि, दुःशासन, दुर्योधन, भीष्म पितामह और अन्य सभी पात्रों की क्रियाशीलता के साथ–साथ उनकी प्रतीकात्मकता को भी अनुभव करेंगे। विनय ने अपनी गहन अर्थ वाली भावनाओं को जीवन के क्रमिक विकास के साथ सामंजस्य स्थापित करने का प्रसंशनीय प्रयास किया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ0 विनय, (1966) हिन्दी प्रबन्ध काव्यों पर महाभारत का प्रभाव, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, पृ0 108
2. वही, पृ0 108
3. वही, पृ0 108
4. वही, पृ0 109
5. कोहली नरेन्द्र और भ्रमर रामकुमार के महाभारत मूलक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन, कुमार बसन्त, शोध प्रबन्ध, पृ0 125
6. वही, पृ0 126
7. डॉ0 विनय, (1966) हिन्दी प्रबन्ध काव्यों पर महाभारत का प्रभाव, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, पृ0 272
8. डॉ0 विनय, (2014), महाभारत उद्योग पर्व, रूपा पब्लिकेशन्स इंडिया, दिल्ली, पृ0 49/19–20
9. कृष्णायन, शिवदास, खेमराज श्रीकृष्ण दास, दिल्ली, पृ0 54
10. डॉ0 विनय, (2020), महाभारत के अमर पात्र : भीष्म पितामह, डायमेंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 150
11. डॉ0 विनय, (1966) हिन्दी प्रबन्ध काव्यों पर महाभारत का प्रभाव, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, पृ0 128
12. डॉ0 विनय, (2020), महाभारत के अमर पात्र : भीष्म पितामह, डायमेंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 152
13. महाभारत रहस्य, अनुवादक–शशी भूषण, पृ0 23–24
14. वही, पृ0 27
15. वही, पृ0 28
16. डॉ0 विनय, (2014), महाभारत उद्योग पर्व, रूपा पब्लिकेशन्स इंडिया, दिल्ली, पृ0 140/7
17. डॉ0 विनय, (2017), महाभारत के अमर पात्र : कुन्ती, डायमेंड बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 86
18. वही, पृ0 86
19. महाभारत रहस्य, स्वामी ज्योर्तिमयानन्द, इंटरनेशनल योगा सोसायटी, नई दिल्ली, पृ0 35
20. डॉ0 विनय, (2017), महाभारत के अमर पात्र : धृतराष्ट्र, डायमेंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 59
21. व्ही, पृ0 59
22. महाभारत रहस्य, स्वामी ज्योर्तिमयानन्द, इंटरनेशनल योगा सोसायटी, नई दिल्ली, पृ0 53
23. आनन्द कुमार, (2019), अंगराज, डायमेंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 68